राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 9900/2005

पवन प्रजापति पुत्र श्री श्री आशा लाल प्रजापति उम्र 33 वर्ष, निवासी मकान नं. 255/3, धान मंडी, दिल्ली गेट के अंदर, कुम्हार मोहल्ला, अजमेर (राजस्थान)

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. भारत संघ को अपने सचिव, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली के माध्यम से

2. पुलिस महानिदेशक, सीमा सुरक्षा बल, 10, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-3

----प्रत्यर्थीगण

बनाम

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से	:	श्री सुनील समदरिया, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी (गण) की ओर से	:	श्री आशीष कुमार, अधिवक्ता
		श्री शुभंकित भटनागर, अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति अनूप कुमार ढंड

<u>आदेश</u>

आदेश सुरक्षित करने की तिथि	:	11.07.2023
आदेश उच्चारित करने की तिथि	:	19.07.2023

<u>रिपोर्टेबल</u>

1. इस याचिका में शामिल मुद्दा यह है कि क्या किसी प्रशासनिक कार्रवाई या आदेश को कारणों से समर्थित करने की आवश्यकता है? क्या अनुशासनात्मक और अपीलीय प्राधिकारी को किसी कर्मचारी के खिलाफ कोई भी कार्रवाई करने से पहले स्पष्ट आदेश पारित करना चाहिए?"

2. याचिकाकर्ता द्वारा निम्नलिखित प्रार्थना के साथ यह याचिका दायर की गई है:

> "उपरोक्त तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में, माननीय न्यायालय से यह प्रार्थना की जाती है कि:
>
> (i) दिनांक 8.3.2004 और 31.08.2004 के आदेशों को रद्द करने और

आपास्त करने और सभी परिणामी लाभों के साथ याचिकाकर्ता को बहाल करने का प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया जाए,

(ii) प्रत्यर्थीगण को इस प्रकार लाभ बहाल करने का निर्देश देना जैसेकि आक्षेपित आदेश कभी पारित ही नहीं किए गए हों,

(iii) कोई अन्य राहत जिसे यह न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित और उपयुक्त समझे, भी दी प्रदान की जाए, और

(iv) रिट याचिका की लागत दी जाए"

3. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का कहना है कि याचिकाकर्ता सीमा सुरक्षा बल (संक्षेप में 'बीएसएफ') में एक कांस्टेबल के रूप में कार्यरत था और उसे 27.10.2003 से 4.11.2003 तक 8 दिनों की आकस्मिक छुट्टी दी गई थी, लेकिन वह 77 दिनों से अधिक समय तक छुट्टी पर रहा और 20.01.2004 को अपनी सेवा में पुनः हाजिर हो गया। अधिवक्ता का कहना है कि उसकी अनुपस्थिति का कारण उसके माता-पिता का रोगग्रस्त होना था। अधिवक्ता का कहना है कि उसे 01.03.2004 को आरोप-पत्र दिया गया था, लेकिन आरोप-पत्र जारी करने से पहले, साक्ष्य दर्ज करने की कार्यवाही सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 (संक्षेप में '1969 के नियम') के नियम 48 के तहत निहित सांविधिक प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए 11.02.2004, 12.02.2004 और 16.02.2004 को संचालित की गई थी। अधिवक्ता का कहना है कि 1969 के नियमों के नियम 44 के अनुसार, अधिकारियों के लिए यह अनिवार्य था कि वे पहले आरोप-पत्र पेश करें और उसके बाद साक्ष्य दर्ज करें, लेकिन यहां तत्काल मामले में, साक्ष्य पहले दर्ज किया गया और आरोप-पत्र बाद में प्रस्तुत किया गया। अधिवक्ता का कहना है कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव पर विचार किए बिना, प्रत्यर्थीगण ने 08.03.2004 को कोई स्पष्ट या तर्कसंगत आदेश पारित किए बिना आक्षेपित आदेश पारित कर दिया। अधिवक्ता का कहना है कि समरी सुरक्षा बल न्यायालय की ओर से बिल्कुल भी औचित्य का प्रयोग नहीं किया गया। अधिवक्ता का कहना है कि उक्त आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की और उसे दिनांक 31.08.2004 के आदेश के तहत बिना कोई कारण बताए सरसरी तौर पर खारिज कर दिया गया। अधिवक्ता का कहना है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी के साथ-साथ अपीलीय प्राधिकारी को याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों और याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए बचाव पर विचार किया जाना चाहिए था, लेकिन यहां इस मामले में, दोनों प्राधिकारियों की ओर

से औचित्य का कोई उपयोग नहीं किया गया जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन हुआ है। अधिवक्ता ने आगे कहा कि याचिकाकर्ता की अनुपस्थिति के कारणों को अधिकारियों को समझाया गया था और इसका कारण यह था कि याचिकाकर्ता के दादा की मृत्यु हो गई थी और आवश्यक अनुष्ठान करने के लिए याचिकाकर्ता की उपस्थिति आवश्यक थी और उसके बाद, याचिकाकर्ता के माता-पिता बीमार पड़ गए और उनकी देखभाल करते हुए वह घर पर ही रहे। अधिवक्ता का कहना है कि ये सभी बचाव अधिकारियों को सुनाए गए थे लेकिन अधिकारियों द्वारा आदेशों को पारित करने के समय इन तथ्यों पर विचार नहीं किया गया। अधिवक्ता का कहना है कि एक तर्कसंगत और स्पष्ट आदेश पारित करना अधिकारियों पर निर्भर था, लेकिन यहां मौजूदा मामले में, इस प्रक्रिया का प्रयोग नहीं किया गया है। उन्होंने आगे कहा कि उनकी अपील को खारिज करने का आदेश याचिकाकर्ता को अजमेर में दिया गया था, इसलिए, इस न्यायालय के पास राजस्थान राज्य में इस याचिका पर विचार करने का क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार है। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया है:-

(i) एस.एन. मुखर्जी बनाम भारत संघ, एआईआर 1990 एससी 1984 में प्रकाशित;

(ii) भारत संघ एवं अन्य बनाम विष्णु लाल नाई एवं अन्य, 2005 (2) खंड XLVII आरएलआर 113 में प्रकाशित;

(iii) महेंद्र प्रताप सिंह कपिल बनाम भारत संघ एवं अन्य, 1999 (1) डब्लूएलसी (राजस्थान) 375 में प्रकाशित; **और**

(iV) नवल किशोर शर्मा बनाम भारत संघ और अन्य, ने 2014 (9) एससीसी 329 में प्रकाशित।

अधिवक्ता का कहना है कि ऊपर दी गई दलीलों के मद्देनजर, अधिकारियों द्वारा पारित किए गए आदेशों को रद्द और आपास्त किया जाए और प्रत्यर्थीगण को सभी परिणामी लाभों के साथ याचिकाकर्ता को सेवा में वापस बहाल करने का निर्देश दिया जाए।

4. इसके विपरीत, प्रत्यर्थीगण के वकील ने याचिकाकर्ता के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और कहा कि राजस्थान राज्य के भीतर कार्रवाई का कोई कारण उत्पन्न नहीं हुआ है, इसलिए इस न्यायालय के पास वर्तमान याचिका पर विचार करने का कोई

अधिकारक्षेत्र नहीं है। अधिवक्ता ने कहा है कि न तो कार्रवाई का कारण और न ही कार्रवाई के कारण का कोई भाग राज्य के भीतर उत्पन्न हुआ है और केवल आदेश की सूचना उन्हें इस न्यायालय से संपर्क करने का कारण नहीं देती है। अधिवक्ता ने आगे कहा कि 1969 के नियमों के तहत निहित किसी भी सांविधिक प्रावधानों का कोई उल्लंघन नहीं है। अधिवक्ता ने कहा कि पूरी कार्यवाही 1969 के नियमों के नियम 48 के अनुसार आयोजित की गई थी और जब साक्ष्य दर्ज किए गए थे, तो तीन गवाहों का परीक्षण किया गया और याचिकाकर्ता को उनकी प्रति-परीक्षण का अवसर दिया गया था लेकिन याचिकाकर्ता ने सभी गवाहों के प्रति-परीक्षण करने से इनकार कर दिया। उन्होंने आगे कहा कि जब याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र दिया गया तो उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और सेवा रिकॉर्ड में उसकी पिछली प्रविष्टियों को देखते हुए, उसे सेवा से बर्खास्त करने का निर्णय लिया गया। अधिवक्ता ने यह कहा कि यह यह विधि का सुस्थापित प्रस्ताव है कि यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष को स्वीकार करता है और एक आदेश पारित करता है, तो सजा देने वाले आदेश में कोई विस्तृत कारण दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है। सज़ा जांच रिपोर्ट में दर्ज निष्कर्षों के आधार पर दी गई है, इसलिए अनुशासनात्मक और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा कोई और विस्तृत कारण बताने की आवश्यकता नहीं थी, इसलिए प्रत्यर्थीगण ने आक्षेपित आदेश पारित करने में कोई अवैधता नहीं की है। अधिवक्ता ने आगे कहा कि बीएसएफ एक अर्धसैनिक बल है और याचिकाकर्ता को संबंधित अधिकारी को उसकी अनुपस्थिति के कारणों के बारे में सूचित करना चाहिए था, लेकिन याचिकाकर्ता ऐसा करने में विफल रहा है, इसीलिए प्रक्रिया का पालन करते हुए उसके खिलाफ कार्यवाही की गई और उसे सेवा से बर्खास्त करने का निर्णय लिया गया। अधिवक्ता ने कहा कि यह विधि का सुस्थापित नियम है कि उच्च न्यायालय अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के अन्वेषण के खिलाफ अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य नहीं कर सकता है। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा रखा है:-

(1) तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम उत्पल कुमार बसु एवं अन्य, **(1994) 4 एससीसी** 711 में प्रकाशित,

(2) राम नारायण सिंह बनाम सेनाध्यक्ष और अन्य, 2002(2) **एमपीएलजे** 324 में प्रकाशित,

(3) केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल और अन्य बनाम अबरार अली, एआईआर

2017 एससी 200 में प्रकाशित,

(4) ज्ञानदेव जाधव बनाम भारत संघ और अन्य, बॉम्बे हाई कोर्ट के डब्ल्यूपी सं. 6578/2014 में प्रकाशित

(5) रामराज मीना बनाम भारत संघ और अन्य, राजस्थान उच्च न्यायालय के **डीबीएसएडब्ल्यू संख्या 333/2022 में प्रकाशित,**

(6) बोलोरम बोरदोलोई बनाम लखीमी गाओलिया बैंक और अन्य, एमएएनयू/एससी/0057/2021 में प्रकाशितः **सिविल अपील संख्या 4394/2020 पर** 08.02.2021 को निर्णित।

5. अधिवक्ता का कहना है कि ऊपर दी गई दलीलों के मद्देनजर, याचिकाकर्ता इस याचिका में इस न्यायालय द्वारा किसी भी तरह की छूट का हकदार नहीं है और याचिका खारिज कर दिए जाने योग्य है।

6. इसके खंडन में याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कहा कि उस पर आरोप-पत्र जारी करने से पहले, पूरे साक्ष्य 1969 के नियमों का उल्लंघन करते हुए दर्ज किए गए थे। उन्होंने आगे कहा कि याचिकाकर्ता ने स्वयं को कभी भी दोषी नहीं माना, प्रत्यर्थीगण ने केवल 03.02.2004 को जारी दस्तावेज़ में ही दोषी शब्द का प्रयोग किया है जबकि याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र 01.03.2004 को जारी किया गया था इसलिए याचिकाकर्ता के पास स्वयं को दोषी मानने का कोई अवसर या कारण उपलब्ध नहीं था। अधिवक्ता ने कहा है कि यदि प्रत्यर्थीगण का ऐसा मानना है कि याचिकाकर्ता ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है, तो उनके पास याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र जारी करने और उससे पहले साक्ष्य दर्ज करने का कोई कारण मौजूद नहीं है। अधिवक्ता ने कहा कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक है।

7. अधिवक्ता परिषद में की गई दलीलों को सुना गया और उन पर विचार किया गया और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।

8. याचिकाकर्ता की मूल शिकायत यह है कि 1969 के नियम के अध्याय VI के तहत निहित अनिवार्य प्रक्रिया और प्रावधान के विरुद्ध कार्य करते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दिनांक 08.03.2004 को एक अस्पष्ट आदेश पारित किया है जिसके द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा पेश किए गए बचाव पर विचार किए बिना उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है। याचिकाकर्ता की दूसरी शिकायत यह है कि अपीलीय प्राधिकारी ने भी बिना कोई कारण

दर्ज किए उसकी अपील को सरसरी तौर से खारिज कर दिया है और एक अस्पष्ट देश पारित कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है।

9. यह स्वीकार्य है कि 1969 के नियमों का अध्याय VI आरोप-पत्र जारी करने, नामांकित व्यक्ति के खिलाफ आरोपों की सुनवाई करनेऔर ऐसे व्यक्ति के खिलाफ आदेश दर्ज करने की प्रक्रिया से संबंधित है। त्वरित संदर्भ के लिए नियम 43, 44, 45 और 48 के तहत निहित प्रासंगिक प्रावधानों को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:

> **43. अपराध रिपोर्ट**- जहां यह आरोप लगाया जाता है कि अधिनियम 1 के अधीन किसी व्यक्ति [किसी अधिकारी या अधीनस्थ अधिकारी के अलावा] ने दंडनीय अपराध किया है, आरोप को परिशिष्ट IVमें निर्धारित प्रपत्र में लिखा जाएगा।
>
> **44. आरोप-पत्र**- जहां यह आरोप लगाया जाता है कि किसी अधिकारी या अधीनस्थ अधिकारी ने अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध किया है, तो आरोप को परिशिष्ट V में निर्धारित प्रपत्र में लिखा जाएगा।
>
> **45. नामांकित व्यक्ति के विरुद्ध आरोप की सुनवाई-** (1) आरोप की सुनवाई अभियुक्त के कमांडेंट द्वारा निम्नलिखित तरीके से की जाएगी-
>
> (i) आरोप और गवाहों के बयान, यदि दर्ज किए गए हैं, तो अभियुक्त को पढ़कर सुनाए जाएंगे।
>
> (ii) यदि गवाहों के लिखित बयान उपलब्ध नहीं हैं, या जहां कमांडेंट किसी गवाह को बुलाना आवश्यक समझता है, तो वह उतने गवाहों को सुनेगा, जितने वह आवश्यक समझे ताकि वह मुद्दे का निर्धारण करने में सक्षम हो सके।
>
> (iii) जहां भी कमांडेंट द्वारा गवाहों को बुलाया जाएगा, आरोपी को उनसे जिरह करने का अवसर दिया जाएगा।
>
> (iv) इसके बाद, आरोपी को अपने बचाव में बयान देने का अवसर दिया जाएगा।
>
> (2) उप-नियम (1) के तहत आरोप सुनने के बाद, कमांडेंट:-
>
> (i) ऐसा कोई भी दंड दे सकता है जिसे देने का उसे अधिकार है; या

(ii) आरोप खारिज कर सकता है; या

(iii) साक्ष्य का रिकॉर्ड तैयार करने या उसके खिलाफ साक्ष्य का सारांश तैयार करने के लिए आरोपी को रिमांड पर ले सकता है; या

(iv) उसे समरी सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमे के लिए रिमांड पर ले सकता है:

बशर्ते कि, ऐसे मामलों में जहां कमांडेंट 7 दिनों से अधिक कारावास या हिरासत में रखता है, वह साक्ष्य के सार और अभियुक्त के बचाव को रिकॉर्ड करेगा:

बशर्ते यह और कि वह आरोप को खारिज कर देगा, यदि उसकी राय में आरोप साबित नहीं हुआ है या वह इसे खारिज कर सकता है यदि वह मानता है कि अभियुक्त के पिछले चरित्र और उसके खिलाफ आरोप की प्रकृति के कारण इस मामले में आगे कार्यवाही किया जाना उचित नहीं है:

बशर्ते यह भी कि, मृत्यु की सजा वाले सभी अपराधों के मामले में साक्ष्य का रिकॉर्ड लिया जाएगा।

[बशर्ते कि धारा 14, 15, 17, 18 के तहत अपराध और अधिनियम की धारा 46 के तहत दंडनीय 'हत्या' के अपराध के मामले में, यदि आरोपी फरार हो गया है या छोड़ दिया गया है, तो कमांडेंट उसकी अनुपस्थिति में आरोप की सुनवाई करेगा साक्ष्य का रिकार्ड तैयार करने के लिए मामले का रिमांड लेगा।]

48. साक्ष्य का रिकॉर्ड- (1) [साक्ष्य के रिकॉर्ड का आदेश देने वाला अधिकारी या तो साक्ष्य का रिकॉर्ड स्वयं तैयार कर सकता है या किसी अन्य अधिकारी को ऐसा करने के लिए आदेश दे सकता है।

(2) गवाह अभियुक्त की उपस्थिति में अपना साक्ष्य देंगे और अभियुक्त को उसके खिलाफ साक्ष्य देने वाले सभी गवाहों के प्रति-परीक्षण करने का अधिकार होगा।

[बशर्ते कि जहां जांच अदालत में किसी गवाह का बयान उपलब्ध हो, ऐसे गवाह की जांच से छूट दी जा सकती है और उक्त बयान की मूल प्रति रिकॉर्ड पर ली जा सकती है। उसकी एक प्रति अभियुक्त को दी जाएगी

और यदि उसे जांच न्यायालय में गवाह से प्रति-परीक्षण करने का अवसर नहीं दिया गया तो उसे ऐसी प्रति-परीक्षण करने का अधिकार होगा।]

(3) अभियुक्त के खिलाफ सभी गवाहों का परीक्षण करने के बाद, उसे निम्नलिखित शब्दों में चेतावनी दी जाएगी; "यदि बयान देना चाहते हैं तो आप ऐसा कर सकते हैं, आप ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं हैं और आप जो भी कहेंगे उसे लिखित रूप में लिया जाएगा और साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।" उपरोक्त तरीके से चेतावनी दिए जाने के बाद आरोपी जो कुछ भी बताएगा उसे लिखित रूप में लिया जाएगा।

(4) अभियुक्त बचाव में गवाहों को बुला सकता है और साक्ष्य दर्ज करने वाला अधिकारी उनसे ऐसा कोई भी प्रश्न पूछ सकता है जो ऐसे गवाहों द्वारा दिए गए साक्ष्य को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक हो सकता है।

(5) सभी गवाह शपथ या प्रतिज्ञान पर साक्ष्य देंगे:
बशर्ते कि, अभियुक्त को कोई शपथ या प्रतिज्ञान नहीं दिया जाएगा और न ही उसका प्रति-परीक्षण किया जाएगा।

(6) (क) गवाहों द्वारा दिए गए बयान आम तौर पर कथात्मक रूप में दर्ज किए जाएंगे और साक्ष्य रिकॉर्ड करने वाला अधिकारी, आरोपी के अनुरोध पर, साक्ष्य के किसी भी हिस्से को प्रश्न और उत्तर के रूप में दर्ज करने की अनुमति दे सकता है।

(ख) गवाहों को अपने बयान पढ़ने लेने और समझा किए जाने के बाद उस पर हस्ताक्षर करना होगा।

1 [(6क) साक्ष्य का रिकॉर्ड तैयार करने वाले अधिकारी के समक्ष गवाहों की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए अधिनियम की धारा 89 के प्रावधान लागू होंगे।]

(7) जहां किसी गवाह को उपस्थित होने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है या वह उपलब्ध नहीं है या समय या धन के अनुचित व्यय के बिना उसकी उपस्थिति प्राप्त नहीं की जा सकती है और साक्ष्य दर्ज करने वाले अधिकारी द्वारा इस संबंध में एक प्रमाणपत्र दिए जाने के बाद, हस्ताक्षरित एक लिखित बयान दिया जाता है। ऐसे गवाह के बयान को

अभियुक्त को सुनाया जा सकता है और साक्ष्य के रिकॉर्ड में शामिल किया जा सकता है।

(8) साक्ष्य की रिकॉर्डिंग पूरी होने के बाद साक्ष्य दर्ज करने वाला अधिकारी निम्नलिखित प्रपत्र में एक प्रमाणपत्र देगा:-

"प्रमाणित किया जाता है कि.....कमांडेंट..... द्वारा आदेशित साक्ष्य का रिकार्ड अभियुक्त उपस्थिति एवं सुनवाई में किया गया है और प्रावधानों के नियम 48 का अनुपालन किया गया है।

10. रिकॉर्ड के अवलोकन से पता चलता है कि अपराध रिपोर्ट के अनुसार याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप यह है कि उसे 27.10.2003 से 04.11.2003 तक 8 दिन की आकस्मिक छुट्टियाँ दी गई थीं लेकिन वह उक्त छुट्टियों की समाप्ति के बाद भी ड्यूटी में शामिल होने में विफल रहा और वह 20.01.2004 को स्वेच्छा से सेवा में फिर से शामिल हो गया, अतः, वह 77 दिनों तक अधिक अनुपस्थित रहा इस अपराध रिपोर्ट के आधार पर, जांच अधिकारी ने जांच की और 11.02.2004, 12.02.2004 और 16.02.2004 को गवाहों के साक्ष्य दर्ज किए और उसके बाद 01.03.2004 को याचिकाकर्ता को आरोप-पत्र दिया गया। याचिकाकर्ता की शिकायत यह है कि उस पर आरोप-पत्र तामील करने के बाद किसी भी गवाह का कोई साक्ष्य दर्ज नहीं किया गया, इसलिए उसे गवाहों का प्रति-परीक्षण करने से वंचित कर दिया गया है। याचिकाकर्ता की एक और शिकायत यह है कि जब गवाहों के साक्ष्य दर्ज किए गए, तो कोई आरोप-पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था, इसलिए, उसे आरोपों के बारे में पता नहीं था, इसलिए, वह मामले को लड़ने में सक्षम नहीं था और इस तरह की अनियमित प्रक्रिया का पालन करके, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है। लेकिन फिर भी उनकी सेवाएं बर्खास्त करने का एक अस्पष्ट आदेश पारित कर दिया गया है।

11. यह तथ्य विवादित नहीं है कि याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष ये सभी आधार उठाए, जिन्होंने बिना कोई कारण बताए अपील को सरसरी तौर से खारिज कर दिया।

12. सुविधा के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 08.03.2004 को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:

"कार्यालय कमांडेंट 129 बटालियन बीएसएफ सी/ओ 56 एपीओ दिनांक 8

मार्च, 2004।

आदेश

जबकि, इस यूनिट के नंबर 950056760 कांस्टेबल पवन प्रजापति पर धारा 19 (ख) के तहत अपराध के लिए 08.03.2004 को एचओआर 129 बटालियन, बीएसएफ सी/ओ 56 एपीओ में समरी सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया था। व्यक्ति को आरोपों का दोषी पाया गया और 'सेवा से बर्खास्त करने' की सज़ा सुनाई गई। न्यायालय की सजा अभियुक्त को दिनांक 08.03.2004 को प्रख्यापित की गई।

2. 05.11.2003 से 20.01.2004 तक की उनकी अनुपस्थिति अवधि को उन्होंने सभी प्रयोजनों के लिए "अकार्य-दिवस" माना है। उन्हें 08.03.2004 (एएन) से 129 बीएन बीएसएफ की कर्मचारी क्षमता से हटा दिया गया है।

दिनांक- 8.3.2004

वितरण:-

1. व्यक्ति को: यदि आप इस आदेश से व्यथित महसूस करते हैं, तो आप इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से 3 महीने के भीतर आईजी बीएसएफ, फीट मुख्यालय जेएमयू को एक याचिका प्रस्तुत कर सकते हैं।

2 से 6 असंबंधित।"

13. दिनांक 08.03.2004 के इस आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की, जिसे 31.08.2004 को निम्नानुसार टिप्पणी देते हुए खारिज कर दिया गया:-

"भारत सरकार
गृह मंत्रालय
महानिदेशालय सीमा सुरक्षा बल
(डिस्क. एवं लिट शाखा)

10, सीजीओ कॉम्प्लेक्स
लोधी रोड, नई दिल्ली-3
31 अगस्त, 2004

सेवा में,
एक्स क्रमांक 95005676
कांस्टेबल पवन प्रजापति

(कमांडेंट 129 बटालियन बीएसएफ के माध्यम से)

विषय: सारांश सुरक्षा बल न्यायालय (एसएसएफसी) परीक्षण द्वारा दोषसिद्धि के खिलाफ सांविधिक याचिका

कृपया 08.03.04 को आयोजित समरी सिक्योरिटी फोर्स कोर्ट (एसएसएफसी) मुकदमे में आपकी दोषसिद्धि के खिलाफ आपकी सांविधिक याचिका दिनांक 01.06.04 का संदर्भ लें।

2. आपकी याचिका में उठाए गए मुद्दों पर एसएसएफसी परीक्षण कार्यवाही में प्रासंगिक रिकॉर्ड, कानूनी प्रावधानों और सबूतों के आलोक में बहुत सावधानी से विचार किया गया है। मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर विस्तृत विचार करने और सावधानीपूर्वक जांच किए जाने के बाद, माननीय डीजी बीएसएफ ने आपकी याचिका को गुणहीन होने के कारण खारिज कर दिया है।

दिनांक 31.08.2004

ह/-
मुख्य विधि अधिकारी
(डी एंड एल),
महानिरीक्षक द्वारा"

14. दिनांक 08.03.2004 और 31.08.2004 के दोनों आदेशों के अवलोकन मात्र से स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि ये आदेश स्पष्ट आदेश पारित किए जाने की आवश्यकता को पूरा नहीं करते हैं।

15. **एस.एन. मुखर्जी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, एआईआर 1990 एससी 1984** में प्रकाशित, के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की संवैधानिक पीठ ने निर्णया दिया है कि प्रशासनिक कार्यों को कारणों द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए क्योंकि प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा कारणों की रिकॉर्डिंग एक वैधानिक उद्देश्य को पूरा करती है, अर्थात् यह मनमानी की संभावना को बाहर करती है और निर्णय लेने की प्रक्रिया में निष्पक्षता के परिमाण का आश्वासन देती है। इसे पैरा 38 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"38: प्राकृतिक न्याय के नियमों का अंतर्निहित उद्देश्य "न्याय में अन्याय को रोकना" और "कार्रवाई में निष्पक्ष प्रक्रिया" को सुरक्षित करना है। जैसा कि पहले बताया गया है, अर्ध-न्यायिक कार्यों का प्रयोग करने वाले प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा अपने निर्णय के कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता मनमानी की संभावनाओं को समाप्त करती है और निर्णय लेने की प्रक्रिया में निष्पक्षता का परिमाण सुनिश्चित करते हुए इस उद्देश्य को प्राप्त करती है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विस्तारित क्षितिज को ध्यान

में रखते हुए, हमारी राय है कि कारण दर्ज करने की आवश्यकता को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों में से एक माना जा सकता है जो प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा शक्ति के प्रयोग को नियंत्रित करता है। प्राकृतिक न्याय के नियम मूर्त नियम नहीं हैं। उनके आवेदन की सीमा विशेष वैधानिक ढांचे पर निर्भर करती है जहां प्रशासनिक प्राधिकारी को अधिकारक्षेत्र प्रदान किया गया है। किसी प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा न्यायिक या अर्ध-न्यायिक कार्यों के प्रयोग सहित किसी विशेष शक्ति के प्रयोग के संबंध में, विधायिका, उक्त शक्ति प्रदान करते समय, यह महसूस कर सकती है कि यह व्यापक सार्वजनिक हित में होगा कि प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश के कारणों आदेश में दर्ज किया जाए और पीड़ित पक्ष को सूचित किया जाएगा और वह ऐसी आवश्यकता से मुक्ति प्रदान कर सकती है। इस संबंध में एक स्पष्ट प्रावधान बनाकर ऐसा कर सकती है, जैसाकि संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रशासनिक प्रक्रिया अधिनियम, 1946 और ऑस्ट्रेलिया के प्रशासनिक निर्णय (न्यायिक समीक्षा) अधिनियम, 1977 में निहित है, जिसके तहत कुछ निर्दिष्ट अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों को अधिनियमन के दायरे से बाहर रखा गया है। ऐसा विवर्जन विषय-वस्तु की प्रकृति, योजना और अधिनियम के प्रावधानों के आवश्यक निहितार्थ से भी उत्पन्न हो सकता है। इस तरह के प्रावधान में अंतर्निहित सार्वजनिक हित, कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता से प्राप्त हितकारी उद्देश्य पर भारी पड़ेगा। इसलिए, ऐसे मामले में उक्त आवश्यकता पर जोर नहीं दिया जा सकता है।

16. **सीमेंस इंजीनियरिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य (1976) 2 एससीसी 981** में प्रकाशित, के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा या कहा गया है कि प्रत्येक अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी को अपने आदेश के समर्थन में कारण दर्ज करना होगा। प्रत्येक अर्ध-न्यायिक आदेश को कारणों से समर्थित होना चाहिए। ऐसा करने में, ऐसा अधिकार निश्चित रूप से जनता के मन में अधिक विश्वास पैदा करेगा। इसे पैरा 6 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"6. इस अपील से अलग होने से पहले, हमें उस तरीके पर खेद व्यक्त करना चाहिए जिस तरह सहायक कलेक्टर, कलेक्टर और भारत सरकार ने उनके समक्ष कार्यवाही का निपटारा किया। यह निर्विवाद है कि

विभेदकारी शुल्क की मांग करने वाले नोटिस से उत्पन्न सहायक कलेक्टर के समक्ष कार्यवाही अर्ध-न्यायिक कार्यवाही थी और इसी तरह कलेक्टर और भारत सरकार के समक्ष पुनरीक्षण की कार्यवाही भी थी। वास्तव में, प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा इस पर कोई विवाद नहीं किया गया। अब यह स्थापित कानून है कि जहां कोई प्राधिकारी अर्ध-न्यायिक कार्य के दौरान कोई आदेश देता है तो उसे अपने आदेश के समर्थन में अपने कारणों को दर्ज करना होगा। प्रत्येक अर्ध-न्यायिक आदेश को कारणों से समर्थित होना चाहिए। यह इस न्यायालय के एन.एम.देसाई बनाम टेस्टील्स लिमिटेड के साथ समाप्त होने वाले निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला द्वारा निर्धारित किया गया है। लेकिन, दुर्भाग्य से, सहायक कलेक्टर ने विभेदक शुल्क की मांग को स्वीकार करते हुए अपने आदेश के समर्थन में कोई कारण नहीं बताया। यह सीधे तौर पर विधि की आवश्यकता की अवहेलना थी। कलेक्टर ने पुनरीक्षण में कुछ कारण तो बताए लेकिन वह संतोषजनक नहीं थे। उन्होंने अपने आदेश में अपीलकर्ताओं द्वारा दिनांक 8 दिसंबर, 1961 को दिए गए उनके अभ्यावेदन में दिए गए तर्कों पर ध्यान नहीं दिया, जिन्हें 4 जून, 1965 के बाद के अभ्यावेदन में दोहराया गया था। यह सुझाव नहीं दिया गया है कि कलेक्टर को अदालत की तरह अपीलकर्ताओं की दलीलों पर चर्चा करते हुए एक विस्तृत आदेश देना चाहिए था। लेकिन कलेक्टर का आदेश थोड़ा और स्पष्ट और मुखर हो सकता था ताकि यह आश्वासन दिया जा सके कि अपीलकर्ताओं के मामले पर उनके द्वारा उचित रूप से विचार किया गया है। यदि अदालतों को प्रशासनिक कानून के प्रसार के साथ प्रशासनिक अधिकारियों और अधिकरणों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना है, जैसा कि वास्तव में, कुछ प्रकार के मामलों में किया जाता है, तो उन्हें प्रतिस्थापित किया भी जा सकता है, लेकिन इसके लिए यह अनिवार्य है कि प्रशासनिक अधिकारियों और अधिकरणों को अपने आदेशों से प्रभावित होने वाले व्यक्तियों की उचित और निष्पक्ष सुनवाई करें और उनके द्वारा दिए गए आदेशों के समर्थन में पर्याप्त स्पष्ट और स्पष्ट कारण बताएं। केवल तभी प्रशासनिक अधिकारी और अर्ध-न्यायिक कार्य करने वाले

अधिकरण अपने अस्तित्व को सही ठहराने और न्यायिक प्रक्रिया में विश्वास जगाकर लोगों में विश्वसनीयता बनाए रखने में सक्षम होंगे। किसी आदेश के समर्थन में कारण बताने की आवश्यकता वाला नियम, जैसे *निष्पक्ष सुनवाई के सिद्धांत* की भांति, प्राकृतिक न्याय का एक बुनियादी सिद्धांत है जिसे हर अर्ध-न्यायिक प्रक्रिया को सूचित करना चाहिए और इस नियम को इसकी उचित भावना के रूप में देखा जाना चाहिए और इसके अनुपालन का महज दिखावा विधि की आवश्यकता को पूरा नहीं करेगा। भारत सरकार भी संशोधन आवेदन को अस्वीकार करने के आदेश के समर्थन में कोई कारण बताने में विफल रही। लेकिन हम यह मान सकते हैं कि पुनरीक्षण आवेदन को अस्वीकार करते समय उसने वही कारण अपनाया जो कलेक्टर के पास था। कलेक्टर द्वारा दिया गया कारण, जैसा कि पहले ही बताया गया है, संतोषजनक नहीं था, और इसलिए यह बेहतर होता अगर भारत सरकार ने पुनरीक्षण आवेदन को खारिज करते समय अपीलकर्ताओं की ओर से दिए गए तर्कों का निपटान करने के लिए उचित और पर्याप्त कारण बताए होते। हम आशा करते हैं और यह विश्वास रखते हैं कि भविष्य में सीमा शुल्क अधिकारी उनके सामने आने वाली कार्यवाहियों पर निर्णय लेने में अधिक सावधानी बरतेंगे और उचित रूप से तर्कसंगत आदेश पारित करेंगे, ताकि जो लोग ऐसे आदेशों से प्रभावित हों, उन्हें आश्वासन दिया जाए कि उनके मामले पर सीमा शुल्क अधिकारियों द्वारा उचित विचार किया गया है और सीमा शुल्क अधिकारियों द्वारा किए गए निर्णय की वैधता का परीक्षण किसी उच्च अधिकरण या अदालत में भी संतोषजनक ढंग से किया जा सकता है। वास्तव में, यह वांछनीय होगा कि सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क कानूनों के तहत उत्पन्न होने वाले मामलों में आयकर अपीलीय अधिकरण या विदेशी मुद्रा विनियमन अपीलीय बोर्ड की तरह एक स्वतंत्र अर्ध-न्यायिक अधिकरण स्थापित किया जाए, जो इन कानूनों के तहत ऐसी अपीलों और पुनरीक्षण आवेदनों का निर्धारण भारत सरकार पर छोड़ने के स्थान पर, अंततः अपील और संशोधन आवेदनों का निपटान करेगा। एक स्वतंत्र अर्ध-न्यायिक अधिकरण निश्चित रूप से जनता के मन में अधिक विश्वास पैदा करेगा।

17. विधि का यह सुस्थापित सिद्धांत है कि प्रशासनिक आदेश पारित करते समय कारणों को दर्ज किया जाना चाहिए क्योंकि ऐसे कारणों से प्राधिकारी की मनमानी के बारे में सभी संदेह दूर हो जाते हैं। जब तक विधि प्राधिकारी को इस तरह से सशक्त नहीं बनाता कि कारणों को छिपाया जाए, ऐसे प्राधिकारी द्वारा कारण बताना उसका कर्तव्य बन जाता है।

18. दंड देने की अनुशासनात्मक शक्ति न केवल किसी व्यक्ति को कलंकित करती है, बल्कि उसकी आजीविका को भी छीन लेती है, ऐसी कार्यवाहियों के लिए निष्पक्ष पक्ष और निष्पक्ष प्रक्रिया की कठोर प्रक्रिया की आवश्यकता होती है।

19. वर्तमान मामले में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने केवल अपना *इप्से डिक्सिट* दर्ज किया है कि याचिकाकर्ता पर धारा 19(ख) के तहत अपराध के लिए 08.03.2004 को समरी सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया था और उसे आरोप का दोषी पाया गया था और उसे सेवा से बर्खास्तगी का दंड दिया गया था। इस बात का कोई कारण दर्ज नहीं किया गया है कि उन्हें सेवा से बर्खास्त करने का ऐसा निष्कर्ष क्यों निकाला गया है।

20. दिनांक 08.03.2004 का आक्षेपित आदेश सारांश सुरक्षा बल न्यायालय द्वारा बिना कोई कारण बताए पारित किया गया है और इसी प्रकार, अपीलीय प्राधिकरण द्वारा दिनांक 31.08.2004 को पारित आदेश, ऐसे आदेश को पारित किए जाने का कोई कारण नहीं बताता है। अतः दोनों आदेश असपष्ट आदेश हैं, जिन्होंने प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया है। इसलिए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा इस मामले में 1969 के नियमों के अध्याय VI के तहत निहित प्रक्रिया का पालन करने के बाद उचित तर्कसंगत आदेश पारित करने के लिए पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है।

21. इस स्तर पर, यह न्यायालय याचिकाकर्ता द्वारा इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने के संबंध में प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता द्वारा उठाई गई आपत्तियों पर निर्णय लेना तर्कसंगत और उचित नहीं समझता है, क्योंकि दिनांक 31.08.2004 का आक्षेपित आदेश याचिकाकर्ता को उनके अजमेर स्थित आवासीय पते पर सम्प्रेषित कर दिया गया था और उन्होंने वर्ष 2005 में तुरंत ही इस न्यायालय के समक्ष प्रार्थना की थी, और अब 18 साल बीत जाने के बाद, उन्हें उस क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है जहां आपेक्षित आदेश पारित किए गए हैं। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय इस मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए लागू नहीं होते हैं।

22. ऊपर की गई चर्चाओं के मद्देनजर, दिनांक 08.03.2004 और 31.08.2004 के आक्षेपित आदेशों को रद्द और आपास्त किया जाता है। इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर दोनों पक्षों को सुनवाई का अवसर देने के बाद 1969 के नियमों के अध्याय VI के तहत निहित प्रावधानों का पालन करते हुए मामले को तर्कसंगत और स्पष्ट आदेश पारित करने के लिए उचित प्राधिकारी को वापस भेज दिया जाता है।

23. परिणामस्वरूप, यह याचिका आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है। प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता को सेवा में वापस बहाल करने का निर्देश दिया गया है, लेकिन वह सेवा से हटाए जाने की तारीख से अपनी बहाली तक कोई पिछला वेतन पाने का हकदार नहीं होगा।

24. स्थगन आवेदन और सभी आवेदन (लंबित, यदि कोई हों) भी निस्तारित किए जाते हैं।

25. कोई लागत शामिल नहीं होगी।

(अनूप कुमार ढंड), न्यायमूर्ति

MR/Pcg/10

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण:- यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।